पेरिस
दिसम्बर ६, २००६

सन्देश संख्या १०८

अमरीकी भक्तों को पत्र

(अरिजोना और कैलिफोर्निया के अमरीकी भक्त को पत्र)

हैंकजी और रिकजी,

नमस्ते,

क्रियायोग की लाहिड़ी वंश–परम्परा में मेरे पूर्वजों के चमत्कारों के बारे में लघु पत्र पाकर अच्छा लगा । किन्तु जो महत्वपूर्ण बात है वह है– झूठी मान्यताओं, आरोपणों एवं कल्पनाओं में फँसे बिना समझदारी की ऊर्जा एवं परिपक्वता में यथार्थता के प्रति सजग होना । क्योंकि ये ही विभेदकारी चित्तवृत्ति अर्थात् मन में उत्तेजना एवं गड़बड़ी के मूल कारण हैं । ''मन'' एक मिथक है और भ्रांति ''मैं'' उसका विषाणु । यह ''मैं'' स्वयं को परिपुष्ट तथा स्थायी बनाने हेतु आत्मसंरक्षी यन्त्ररचना के रूप में अनवरत रूप से चालाकी एवं कल्पना में लिप्त रहता है । यही प्रक्रिया जीवन और उसका सहज बोध तथा प्रेम से निःसृत स्वतःस्फूर्त चुनावरहित तटस्थता एवं पूर्ण सजगता की कृपा से मानवीय चेतना के वियोजन को बनाये रखती है ।

जीवन और प्रेम से यह वियोजन ही मानवता का मूलभूत दुःख और व्याधि है जो मानव संबंधों के प्रत्येक स्तर पर असामञ्जस्य और विवाद को जन्म देता है । स्वाध्याय के माध्यम से (न कि किसी मनोवैज्ञानिक या तथाकथित ''गुरू'' या ''कुण्डलिनी विशेषज्ञ'' या अन्य किसी मूर्खता से) स्वयं के लिए स्वयं द्वारा इस मिथक ''मन'' और भ्रान्ति ''मैं'' की समझदारी चित्तवृत्ति में मौलिक रूपान्तरण और मस्तिष्क में उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) लाता है ।

कृष्ण या ईसामसीह या सन्तों या योगियों या साधुओं या साईंबाबाओं या हिमालयी अवधूतों या लाहिड़ियों द्वारा किए गए चमत्कारों के कूड़ा–कचरे के बारे में चर्चा का, मनुष्य के दुःख एवं पीड़ा से कुछ भी लेना–देना नहीं है । मनुष्य–जाति का कष्ट एवं भ्रांति की समाप्ति केवल अन्तर्मुखी प्रबोध द्वारा ही हो सकती है न कि बहिर्मुखी उत्तेजना द्वारा ।

।। जय जीवन, जय प्रेम ।।